P: ISSN NO.: 2394-0344 RNI No.UPBIL/2016/67980 VOL-2* ISSUE-12* March- 2018
E: ISSN NO.: 2455-0817 *Remarking An Analisation*

# हिन्दी उपन्यास और मनोविज्ञान

**प्रमोद कुमार निरंजन**
प्रवक्ता,
हिन्दी विभाग,
डी0 ए0 वी0 इण्टर कालेज,
महोबा

**सारांश**

प्रेमचन्दोतर हिन्दी उपन्यासों में मनोविश्लेषणवादी उपान्यासों का हिन्दी जगत में विषेष योगदान रहा हैं। इन उपन्यासों में विभिन्न पात्रों के मन की उलझनों, गुत्थियों एवं शंकाओं का निरूपण कथा के माध्यम से किया गया है। जैनेन्द्र, इलाचन्द जोषी एवं अज्ञेय का उल्लेखनीय योगदान रहा हैं। जैनेन्द्र को मनोविष्लेषणवादी उपन्यासों को लिखने में महारथ हांसिल थी। उनके त्याग पत्र की नायिका मृणाल के आत्मपीड़न की गाथा का मनोवैज्ञानिक चित्रण किया गया हैं। साथ ही अनमेल विवाह के दुष्परिणामों का चित्रण भी किया गया हैं। सुनीता में फ्रायड के सिद्धातों के आलोक में हरिप्रसन्न के व्यवहार का चित्रण है। उनके कल्याणी उपन्यास में एक आधुनिक नारी की कथा है, तो वही सुखदा में एक कुण्ठाग्रस्त नारी की कहानी हैं। जैनेन्द्र जी ने आधुनिक समाज में नारी की स्थिति का यथा सत्य निरूपण करने का प्यास किया हैं।

इस परम्परा के दूसरे उपन्यास का इलाचन्द जोशी ने अपने उपन्यासों ''सन्यासी, पर्दे की रानी, प्रेत और छाया तथा जहाज का पंक्षी'' आदि में मानव मन की कुण्ठाओं एवं ग्रन्थियों का सुन्दर विवेचन किया हैं। यद्यापि उनके अधिकांश उपन्यासों की मूल विषय वस्तु प्रेम एवं रोमांस हैं, तथापि उनका विवेचन मनोविज्ञान के आधार पर किया गया हैं।

इसकी अगली कड़ी में अज्ञेय के उपन्यास ''शेखर एक जीवनी तथा'' नदी के द्वीप'' है जो मनोविष्लेषण परख हैं। अज्ञेय में मनोविष्लेषण की गहन क्षमता के साथ–साथ सूक्ष्म सौन्दर्य बोध कला के प्रति ईमानदार चेतना विद्यमान है। शेखर एक जीवनी वैयक्तिक मनोवैज्ञानिक के अध्ययन के क्षेत्र में एक महती उपलब्धि मानी जा सकती हैं। जिसमें जिज्ञासु वाल–शेखर की जिज्ञासायें चरम पर होती हैं, तथा युवा शेखर विद्रोह की हद तक पहुँचकर अपने अन्तर्द्वन्द्व से जूझता रहता हैं।

**मुख्य शब्द :** हिन्दी उपन्यास, मनोवैज्ञानिक
**शोधकाल :** फरवरी 2018 से मार्च 2018

**प्रस्तावना**

प्रत्येक रचनाकार अपने आंतरिक तथा वाह्य परिवेश को अपनी रचनाओं में स्थान देता है। जहॉ मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का आरम्भ इस अवधारणा पर हुआ कि यथार्थ सतह पर नहीं बल्कि मनुष्य के अवचेतन में होता है। मानव के अचेतन में दबी वासनाएं जब अभिव्यक्ति के लिये व्याकुल होती है। तब अपने असली रूप में प्रकट न होकर कुछ उदान्तीकृत रूप में अभिव्यक्त होती है। फ्रायड के अनुसार ''कोई भी कथा कथाकार की अतृप्त इच्छाओं की ऐसी अभिव्यक्ति है, जो पाठक की भी अतृप्त इच्छाओं का प्रतिनिधित्व करती है।''1 इन उपन्यासों का मुख्य आधार मानव मन के अन्तर्द्वन्द, आत्मसंघर्ष, कुण्ठा, बेचैनी, अकेलापन व पीढी विद्रोह आदि कथावस्तु रही है।

**उद्देश्य**

हिन्दी के प्रारंभिक काल के उपन्यासों का उद्देश्य मनोरंजन, शिक्षा तथा उपदेश पर सीमित रहता था, तत्पश्चात प्रेमचन्द्र युग में सिद्वान्त प्रचार एवं वर्ग चेतना उपन्यास का लक्ष्य रहा है। प्रेमचन्द्रोत्तर काल में वैयक्तिक भावों की अभिव्यक्ति स्पष्ट होने लगी।

वहीं मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का उद्देश्य पूर्व के सामाजिक उपन्यासों से सर्वथा भिन्न रहा, पात्रों की मनोभूमि का उद्घाटन उनकी साधारण सी क्रियाओं के मूल में भी अन्तर्निहित मानसिक प्रक्रिया को पहचानना उन्हे प्रकाशित कर बोधगम्य बनाना मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का उद्देश्य है। सामान्यतया पात्रों के मन का चित्रण करना ही मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का उद्देश्य है।''[2] इन उपन्यासों में मानव क्यों और कैसे एक कार्य करता है, इस पर गहराई से ध्यान दिया जाता है। आधुनिक युग की समग्र जटिलताओं से ग्रसित मानव के

अकेलेपन व उससे उत्पन्न आंतरिक मनोवेगों व द्वन्दों का सम्पूर्ण चित्रण इनमें किया जाता है।

**साहित्यावलोकन**

उपन्यास यथार्थपरक हो या काल्पनिक उसमें मनोविज्ञान के तत्व थोडी बहुत मात्रा में अवश्य विद्यमान रहते है। कतिपय उपन्यासों में पात्रों के मानसिक क्रिया–कलाप ज्यादा पाये जाते हैं। उपन्यासों में प्राप्त यही प्रत्यय उन्हे उपन्यासों की अन्य कोटियों से भिन्न रखता है तथा वे मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहलाते हैं। डा0 हरदयाल के शब्दों में कहे तो हिन्दी में सामान्यतया उन उपन्यासों को मनोवैज्ञानिक माना गया है, जिसमें मनुष्य के वाहय क्रिया–कलाप को महत्व न देकर उसके मानसिक क्रिया–कलाप को महत्व दिया जाता है। हिन्दी कथा साहित्य के सरताज मुंशी प्रेमचन्द्र ने यह कहकर कि ''सबसे उत्तम कथा वह होती है, जिसका आधार मनोवैज्ञानिक सत्य पर हो।''[3] साहित्य में मनोविज्ञान की भूमिका को स्वीकार किया है।

अस्तु हम तिलिस्मी ऐयारी जैसे उपन्यासों में भी मनोविज्ञान से सम्बन्धित प्रयत्नों को ढूंढने का प्रयास कर सकते हैं, प्रेमचन्द्र उपन्यासों में अपनी ''सामाजिक प्रतिबद्धता'' के लिये सराहे जाते है। तो वहीं जैनेन्द्र ''मनोवैज्ञानिकता'' के लिये। इसका मतलब यह नहीं कि प्रेमचन्द्र ने अपने पात्रों की मानसिक दशा को दर्शाया ही नहीं या जैनेन्द्र महज मनोविश्लेषण हो करते रहे। प्रेमचन्द्र का 'गबन' उपन्यास तो मध्यर्कीय समाज की मानसिकता को दर्शाता है। 'गोदान' का नायक शुरू से अंत तक अपने अभावों की पूत्रि में ही तो लगा रहता है। उनके ''निर्मला'' उपन्यास को तो हिन्दी का प्रथम मनोवैज्ञानिक उपन्यास कहलाने का गौरव प्राप्त है।''[4]

दर असल प्रेमचन्द्र ने हिन्दी उपन्यास को जिस सीमा तक विकसित कर दिया वहॉ हिन्दी के उपन्यासकारों के सामने दो ही विकल्प शेष थे। या तो वे प्रेमचन्द्र का अनुकरण करते या कथावस्तु और कथा शिल्प दोने की दृष्टि से नई दिशाओं की खोज करते। प्रेमचन्द्रोत्तर अनेक उपन्यासकारों ने दूसरा विकल्प चुना और हिन्दी उपन्यास को विविध दिशाओं में विकसित किया। इस नई दिशाओं में से एक प्रमुख दिशा मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की है।''[5] मार्क्स और फ्रायड के सिद्वान्तों ने हिन्दी साहित्य को सर्वाधिक प्रभावित किया है। इसके प्रभाव स्वरूप हो या यौन सुचिता के नैतिक आतंक से ग्रस्त भारतीय मध्यवर्गीय समाज में पश्चिमी शिक्षा दीक्षा, औद्योगीकरण और नगरीकरण के कारण रूढियों का टूटना हो।''[6] हिन्दी में मनोवैज्ञानिक उपन्यास की धारा चल पडी। जैनेन्द्र के 'परख' उपन्यास से मनोवैज्ञानिक उपन्यासों का सूत्रपात माना जाता है।

हिन्दी उपन्यासों में पहली बार जैनेन्द्र के उपन्यासों में पाठकों को पात्रों के अंतरंग वर्णन के जरिए अपने आपको जानने और समझने का अवसर प्राप्त हुआ। जैनेन्द्र के शब्दों में कहे तो ''मैने जगह जगह कहानी के तार की कडियॉ तोड दी है। सभी पात्रों को मैने अपने ह्रदय की सहानुभूति दी है। दुनिया में कौन है जो बुरा होना चाहता है और कौन है जो बुरा नहीं है, अच्छा ही अच्छा है, न कोई देवता है न पशु। सब आदमी ही है, देवता से कम है और पशु से ऊपर है।''[7]

जैनेन्द्र के परख, सुनीता त्याग पत्र, कल्याणी, सुखदा, विवर्त, मुक्तिबोध, अनन्तर आदि उपन्यास मानव के अन्तर्मन में चलने वाली सूक्ष्माति सूक्ष्म हलचलों का लेखा जोखा प्रस्तुत करते है। इनमें वे व्यक्ति चरित्र को लेकर चलते है। उनके पात्र प्रेम त्रिकोण में ही घूमते नजर आते हैं। उनके स्त्री पात्रों की त्रासदी यह है कि वे जिस पुरूष से प्रेम करती है उनके साथ उनका विवाह नहीं हो पाता और जिसके साथ विवाह बन्धन में बंध जाती है उससे वे प्रेम नहीं करती। यही से उनकी नैतिकता तथा आत्मसुख में संघर्ष उत्पन्न होता है। पति प्रेमी तथा पत्नी प्रेमिका वाला यह द्वन्द्व कामकुन्ठा को जन्म देता है। जैनेन्द्र के उपन्यासों में मुख्य रूप से यही मनोवैज्ञानिक प्रत्यय उभर कर आया है।

दूसरे ख्याति प्राप्त मनोवैज्ञानिक उपन्यासकार इलान्द जोशी ने अपने घृणामयी (लज्जा), सन्यासी, प्रेत और छाया, पर्दे की रानी, निर्वासित, जहाज का पंछी, ऋतुचक्र व भूत का भविष्य आदि उपन्यासों के अन्तर्गत अहम्वादिता, कुष्ठा, मनोविकृति आदि प्रवृत्तियों को चित्रित किया गया है। मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के धारा प्रवाह में अज्ञेय का अपना अलग ही स्थान है। डॉ0 रणवीर रॉग्रा के अनुसार – ''शेखर एक जीवनी'' से पहले का चरित्र चित्रण चित्रपट पर दिखायी गयी 'सिनेमा स्लाइडो' के समान आन्तरायिक था, हिन्दी उपन्यासों में चलचित्रों का सा विकासमान चरित्र और वह भी अन्तदृष्टि (सब्जेक्टिवली) दिखाने का श्रेय अज्ञेय को ही है।''[8] शेखर एक जीवनी, नदी के द्वीप, अपने–अपने अजनबी आदि उपन्यासों में उन्होंने व्यक्तित्व–विकास, कुण्ठाओं तथा उसके विकृत व्यवहार का अत्यन्त ही मर्म स्पर्शी चित्रण किया है।

भगवती प्रसाद वाजपेयी ने अपने उपन्यासों 'निमन्त्रण' विश्वास का बल आदि में स्त्री–पुरूष संबध (वैवाहिक तथा विवाहेत्तर) कुण्ठाएं आदि मनोवैज्ञानिक तथ्यों को रेखांकित किया है। डॉ0 देवराज ने अपने उपन्यास 'पथ की खोज' मैं वे और आप, अजय की डायरी आदि में मनोगृन्थियों तथा यौन समस्याओं का अत्यन्त गहराई से चित्रण किया है। गिरिराज किशोर ने भी अपने उपन्यास 'अंतहर्वस' यात्राऍ आदि में मानसिक तनावों तथा गृन्थियों का चित्रण किया है।

अन्य उपन्यासकारों में शरद देवडा का नाम लिखा जा सकता है जिन्होने 'टूटती इकाइयॉ, आकाश, आप बीती' आदि उपन्यासों के मातहत मानसिक द्वन्द्व को विश्लेषित किया है। धमवीर भारती ने 'गुनाहो का देवता' में वासना को जीवन में आवश्यक बताया है, तो नरेन्द्र कोहली ने 'आतंक' में मानव के आंतरिक व बाहय पक्ष को महानगरीय जीवन के परिप्रेक्ष्य में चित्रित किया है। मोहन राकेश ने 'अंधेरे बन्द कमरे' अन्नपूर्णा देवी ने 'परत दर परत' नरेश मेहता ने 'डूबते मस्तूल' राजकमल चौधरी ने 'मछली मरी हुयी' आदि उपन्यासों में मानव–जीवन के आंतरिक क्रिया–कलापों, मनोग्रन्थियों, कुण्ठाओं आदि का विश्लेषण किया।

उपन्यासों में वर्णित पात्र हमारे आस–पास के जनजीवन में बिखरे पडे हैं। साहित्य मूलतः सामाजिक चरित्रों, पात्रों और परिवेश का ही कलात्मक प्रतिबिम्ब होता है। जब हमारा वर्तमान जीवन ही ईष्या, घृणा, प्रतिशोध और आभावों से भरा पडा है, तब सहज स्नेह, विश्वास और प्रेम के कण, क्षतिपूर्ति के कार्य–कारण बन जाते हैं। मनोविश्लेषणात्मक अध्ययन से तात्पर्य केवल अतृप्त वासनाओं का चित्रण नहीं है बल्कि किसी पात्र या चरित्र विशेष का आक्रामक रूप, असहाय, उदात्त रूप का भी चित्रण हैं।

हिन्दी साहित्य में मनोवैज्ञानिक उपन्यासों के माध्यम से कहीं न कहीं कथा का अपने मनोभावों को व्यक्त करता है। वह अपने साथ घटित घटनाओं, तो अनुभवों, स्थितियों और उनकी प्रतिक्रियाओं के रूप में, कहीं इनसे भी गहरी संवेदना और अवधारणाओं, आस्था और निष्ठा की शक्ल में होता है जो पाठक के मनोभावों से जुडता जाता है। इसी बात को राजेन्द्र यादव इन शब्दों में व्यक्त करते हैं ''एक तरह से देखा जाय तो सारा ईमानदार कथा लेखन औरों के यानि पात्रों के बहाने अपनी ही बात कहता है।''[9]

**निष्कर्ष**

हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों की परम्परा में अधिकांश पात्र किसी न किसी मानसिक विकार से पीडित होते है, जिस कारण उनका व्यवहार समाज की प्रचलित मान्यताओं के अनुकूल नहीं होता है, किन्तु जैसे ही मानसिक विकारों का शमन होता है उनका आचरण सन्तुलित होने लगता हैं। आधुनिक मनोवैज्ञानिक उपन्यास मनुष्य की इन्हीं पीड़ा और त्रासदियों को उकेरकर रचना, रचनाकार और पाठक के मन को एकाकार करता है।

**सन्दर्भ ग्रन्थ सूची**

1. *सिंगमण्ड फ्रायडः द क्लेक्स ऑफ साइको एनालिसिस टू साइण्टिफिक इण्टरेस्ट, पृ0सं0 114*
2. *डॉ0 रामविनोद सिंह : हिन्दी के मनोवैज्ञानिक उपन्यासों में नारी चित्रण, पृ0सं0 101*
3. *प्रेमचन्द : कुछ विचार, पृ0सं0 30*
4. *सुरेश सिन्हा : हिन्दी उपन्यास, पृ0सं0 188–89*
5. *रामदरश मिश्र : हिन्दी उपन्यास के वर्ष, पृ0सं0 52*
6. *रामदरश मिश्र : हिन्दी उपन्यास के वर्ष, पृ0सं0 66*
7. *जैनेन्द्र कुमार : परख 'कुछ शब्द'*
8. *रणवीर रांग्राः मनोवैज्ञानिक हिन्दी उपन्यासों की बृहमत्रयी, पृ0सं0 16*
9. *राजेन्द्र यादव : औरों के बहाने, पृ0सं0 8*